E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi, Assistant Professor, Department of Sanskrit, Dr. Shyama Prasad Mukherjee University, Ranchi

रूपक अलंकार

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

प्रकृति-

यह अर्थालंकार है। (अर्थालंकार वह है जप शब्द विशेष को परिवर्तित कर देने पर भी, अर्थगत सौन्दर्य की अक्षुण्णता के कारण बना रहता है)

व्युत्पत्ति-

रूपक का अर्थ है रूप का आरोप करना-रूपयत्यैकतां नयतीति रूपकमिति व्युत्पत्तिः। रूपवत्करोतीति रूपयतीति (वा) रूपको लक्षणाविशेषः रूपयुक्तं करोतीत्यर्थः। इसके अनुसार परस्पर विरुद्ध धर्म होने से प्रकाशित भिन्न भिन्न स्वरूप वाले उपमान और उपमेय में अत्यन्त साम्य प्रदर्शन के लिए काल्पनिक अभेदारोप रूपक है। एक पदार्थ के साथ अन्य पदार्थ के अभेद-कथन को आरोप कहते हैं।

इतिहास-

रूपक प्राचीनतम अलंकारों में से है, जिसका सर्वप्रथम उल्लेख भरत ने किया है। 'नाट्यशास्त्र' के चार अलंकारों में रूपक की परिगणना की गई है। भरत से पद्माकर तक सभी आचार्यों ने इसका वर्णन किया है। भामह से लेकर पण्डितराज तक रूपक के स्वरूपविवेचन में अभेद, तादूप्य, आरोप तथा उपरंजकता या उपरंजन का प्रयोग किया गया है। रूपक के स्वरूप-निदर्शन में आलंकारिकों में मतैक्य नहीं दिखाई पड़ता। कतिपय आलंकारिक तादूप्य-प्रतीति को स्वीकार करते हैं तो कुछ को अभेद-प्रतीति में ही रूपक का स्वरूप मान्य है।

लक्षण-

आचार्य मम्मट रूपक अलंकार का लक्षण बताते हुए कहते हैं-**"तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः"** अर्थात् उपमान और उपमेय का जो अभेद (अभेदारोप) है, उसे रूपक अलंकार कहते हैं।

स्पष्टीकरण-

आचार्य मम्मट के द्वारा निरूपित लक्षण के आधार पर निम्नांकित बातें स्पष्ट होती हैं-

(क) रूपक में उपमेय एवं उपमान में अत्यंत साम्य के कारण ही अभेदारोप होता है।

(ख) इसके मूल में साम्य या सादृश्य-प्रदर्शन का भाव रहता है।

(ग) इसमें उपमान एवं उपमेय का वैधर्म्य या भेद स्पष्ट रूप से भासित होता है।

(घ) उपमेय एवं उपमान के स्वरूपतः विद्यमान (या कथन) होने के कारण रूपक की अतिशयोक्ति से भिन्नता प्रदर्शित की गई है।

(ङ) उपमेय एवं उपमान के भेद के प्रकाशित होने के कारण यह अपह्नुति से सर्वथा भिन्न है।

मम्मट के विवेचन की दो मुख्य विशेषताएँ हैं- अभेदारोप एवं अत्यंत सादृश्य। इन्होंने उक्त दोनों तत्त्वों का समावेश कर रूपक के स्वरूपविवेचन को आगे बढ़ाया है। मम्मट ने रूपक को सादृश्यमूलक अलंकार मानते हुए इसके आधार पर अभेदारोप की स्थापना की। इस प्रकार उपमेयोपमान की अभेदात्मकता मम्मट की महान् उपलब्धि मानी जा सकती है। रूपक शब्द जिस अर्थ का द्योतक है, उसकी पूर्ण प्रतिष्ठा मम्मट के लक्षण में हुई। रूपक में उपमेय एवं उपमान के भेद को मिटाकर दोनो में एकरूपता स्थापित की जाती है। मम्मट के लक्षण में इसी आशय की ध्वनि है, अतः यह एक वैज्ञानिक लक्षण है ।

उपमेय पर उपमान के निषेध-रहित आरोप को रूपक कहते हैं। इस अलंकार में एक पदार्थ पर अन्य पदार्थ का आरोप कर दोनों में एकरूपता की स्थापना की जाती है अर्थात् विषयी या उपमान विषय या उपमेय को अपना रूप देकर उसे रूपवंत कर देता है या उसके साथ अभेद-संबंध स्थापित करता है- यदा तु विषयी विषयं रूपयति रूपवन्तं करोति तदाऽन्वर्थाभिधानं रूपकम्। इसमें उपमान

उपमेय को अपने रंग में रंग देता है। अतः उपमेय तथा उपमान को एक दूसरे से नितांत अभिन्न प्रदर्शित करने पर रूपक होता है।

रूपक अलंकार में कवि की दृष्टि उपमेय एवं उपमान के धर्मसाम्य पर ही टिकी रहती है तथा दोनों के धर्म में उसे इस प्रकार का ऐक्य भासित होने लगता है कि उनमें भिन्नता दिखाई ही नहीं देती। कवि दोनों को एक मानकर उनके गुणों में ही एकत्व की स्थापना करता है। कवि के मानस चक्षु के समक्ष दोनों के धर्म एक सदृश प्रतिभासित होने लगते हैं और उसकी चेतना उनमें एकत्व प्रस्थापन कर वैधर्म्य को सदा के लिए दूर कर देती है। इस प्रकार रूपक में अभेदारोप का कारण अतिसाम्य ही होता है। उदाहरण के लिए, कहा जाय कि यह मुख चंद्र है, तो यहाँ मुख को चंद्रमा कहने में मुख पर चंद्रत्व का आरोप कर दोनों में एकात्म्य की स्थापना प्रदर्शित होगी। यहां मुख और चंद्रमा में अत्यधिक साम्य के कारण ही अभेद-प्रतीति कराई गई है। कवि मुख को चंद्रमा कहकर मुख के सौंदर्याधिक्य का निदर्शन करना चाहता है। अतः, रूपक में साम्य-स्थापन का विशेष प्रयोजन भी होता है। यहाँ मुख और चंद्रमा के सौंदर्य में अतिसाम्य के कारण ही एकत्व-स्थापन किया गया है। रूपक में कवि का मुख्य प्रयोजन है अतिसाम्य की प्रतीति।

रूपक का आरोप वास्तविक न होकर कवि-कल्पित एवं चमत्कारपूर्ण होना चाहिए अन्यथा वहाँ अलंकारत्व नहीं हो सकेगा ।

उदाहरण-

रावणावग्रहक्लान्तमिति वागमृतेन सः।

अभिवृष्य मरुत्सस्यं कृष्णमेघस्तिरोदधे।।

अर्थात् रावण रूपी अवग्रह (अवर्षण) से सन्तप्त, मरुत् अर्थात् देवता रूपी सस्य (फसल) को इस प्रकार वाणी रूपी अमृत से सींचकर वह कृष्ण (विष्णु) रूपी मेघ तिरोहित हो गया।

स्पष्टीकरण-

प्रस्तुत उदाहरण समस्त वस्तु विषय साङ्गरूपक का है। जब अङ्गी के समस्त अङ्गों का रूपण किया जाए तो वहाँ साङ्गरूपक होता है। साङ्गरूपक में जब सभी अंग आरोप्य शब्द से बोधित हों तो उसे

'समस्तवस्तुविषय' कहा जाता है। प्रस्तुत श्लोक में विष्णु को मेघ रूप में वर्णित करने के ही कारण मरुत् में सस्य का, रावण में अवग्रह का तथा वाणी में अमृत का आरोप हुआ। यहाँ सभी अङ्ग (अवग्रह-अमृत-सस्य) आरोप्य शब्दों से बोधित हैं।

भेद-

आरोप विषय के समान आरोप्यमाण (उपमान) जब शब्दतः उपात्त (कथित) होते हैं, तब वस्तुएं जिसका विषय है, ऐसा (समस्तानि वस्तूनि विषयोऽस्य-इस व्युत्पत्ति के अनुसार) समस्तवस्तुविषयक साङ्गरूपक होता है-**"समस्तवस्तुविषयं श्रौता आरोपिता यदा"।**

जहाँ पर (आरोप्यमाण अंशतः) शब्दतः कथित होता है और (अंशतः) अर्थतः आक्षिप्त होती है उसे एकदेशविवर्त्ति रूपक कहते हैं-**"श्रौता आर्थाश्च ते यस्मिन्नेकदेशविवर्त्ति तत्"**।